टीकाकरण का राजनैतिक अर्थशास्त्र

डॉ. जगन्नाथ चटर्जी

बिल गेट्स व उनके सहयोगी विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 2011-20 को 'टीका दशक' घोषित किया है। हाल ही में बिल गेट्स ने विश्व के नेताओं को मना लिया है कि वे एशिया व अफ्रीका के बच्चों के टीकाकरण हेतु 2 अरब डॉलर का योगदान उनके परमार्थी संगठन को दें। कई अन्य देश भी योगदान देने को आगे आने वाले हैं। बिल एंड मेलिंडा गेट्स फाउंडेशन ने इस कार्यक्रम के लिए 2.3 अरब डॉलर की रकम निर्धारित की है। मगर टीकाकरण को लेकर मचा यह शोरगुल एशिया और अफ्रीका के बच्चों के लिए अच्छा शगुन नहीं है क्योंकि वे एंटीजन का यह अतिबोझ झेल नहीं पाएंगे और नुकसान ही उठाएंगे।

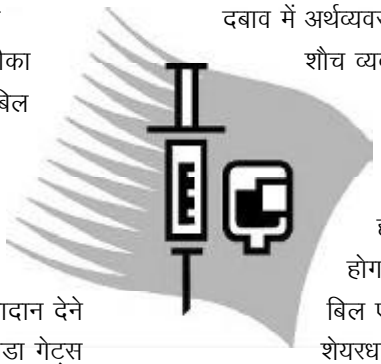

यह राशि करदाताओं के पैसे से आएगी और हर देश में सामाजिक कार्यकर्ता इसके विरोध में उठ खड़े हुए हैं क्योंकि उनके यहां स्वास्थ्य पर होने वाला भारी खर्च सरकारें वहन नहीं कर पा रही हैं। कार्यकर्ताओं का आरोप है कि दरअसल इस तरह के परमार्थ के पीछे ताकतवर दवा उद्योग की लॉबी है। जो लोग बिल एंड मेलिंडा गेट्स फाउंडेशन से परिचित हैं, वे यह भी जानते हैं कि फाउंडेशन ने दवा कंपनियों में काफी निवेश किया हुआ है। फाउंडेशन अपने टीकाकरण कार्यक्रम का नेतृत्व करने के लिए उद्योगों से लोगों को नौकरियां भी दे रहा है। सर्वविदित है कि बिल गेट्स एक काइयां व्यापारी हैं जो दोनों हाथों में लड्डू हासिल करना जानते हैं।

हितग्राही देशों पर इस कार्यक्रम का आर्थिक असर क्या होगा? यह सही है कि शुरुआत में इन देशों को मुफ्त या अत्यंत रियायती दरों पर टीके उपलब्ध कराए जाएंगे, मगर जब फाउंडेशन हाथ खींच लेगा, तब इनसे उम्मीद की जाएगी कि वे टीकों के पूरे दाम चुकाएं। इस दबाव में अर्थव्यवस्थाएं चरमरा जाएंगी। बेहतर पोषण, शौच व्यवस्था और साफ पेयजल जैसी वास्तविक स्वास्थ्य ज़रूरतों की पूर्ति के लिए जो राशि चिन्हित की गई है, वह टीकाकरण की गतिविधि पर खर्च करनी होगी। ऐसे लेन-देन में किसका फायदा होगा? ज़ाहिर है, फायदा दवा उद्योग और बिल एंड मेलिंडा गेट्स फाउंडेशन जैसे उसके शेयरधारकों को मिलेगा। यानी परमार्थ के बहाने फाउंडेशन की ज़ायदाद बढ़ती जाएगी।

कुछ लोग कहेंगे कि दवा उद्योग ने विकासशील देशों को दिए जाने वाले टीकों के दाम घटा दिए हैं। मगर इसका उद्योग पर रत्ती भर भी असर नहीं पड़ेगा। खुद अपने देश यू.एस.ए. में टीका निर्माता कंपनियां हर टीके पर उसके मूल्य के 60 प्रतिशत के बराबर टैक्स भरती हैं। यह राशि वहां के राष्ट्रीय टीका क्षतिपूर्ति कोश में जमा होती है। मगर जब ये कंपनियां टीके निर्यात करती हैं, तो उन्हें कोई टैक्स नहीं देना पड़ता। लिहाज़ा टीकों के दाम कम करने से इन कंपनियों के मुनाफे पर कोई असर नहीं पड़ता।

इसके अलावा, वे जो दाम घटा रही हैं, वह इस उम्मीद में कर रही हैं कि उन्हें विभिन्न सरकारी टीकाकरण कार्यक्रमों में स्थान मिल जाएगा। एक बार यह लक्ष्य हासिल कर लेने के बाद जो भरपूर बिक्री होगी उससे उन्हें खूब लाभ कमाने का मौका मिलेगा। शुरुआत में कीमत कम करने का मतलब यह नहीं है कि एक बार यह लक्ष्य हासिल हो जाने के बाद वे कीमतें फिर से नहीं बढ़ाएंगे, जब सरकारें इन मुनाफाखोरों के चंगुल में होंगी।

तो खरीददारों, सावधान! बिल गेट्स जिस नए रोटावायरस टीके और पेंटावेलेंट टीके की बिक्री में लगे हुए हैं, उनके जाने-माने प्रतिकूल प्रभाव हैं। जहां

रोटावायरस का सम्बंध आंतों में अवरोध से देखा गया है, वहीं पेंटावेलेंट टीकों का उपयोग जिन देशों में किया गया, वहां इसके कारण मौतें हुई हैं।

इन टीकों को सरकारी टीकाकरण कार्यक्रम में शामिल करना खतरे से खाली नहीं है। खास तौर से इसलिए कि टीकों के प्रतिकूल प्रभावों और टीकों के कारण होने वाली मौतों को इन देशों में सामायतः 'संयोगवश' माना जाता है और इसलिए पीड़ितों को कोई क्षतिपूर्ति वगैरह नहीं दी जाती।

असली परमार्थ तो तब होता जब बिल गेट्स विकासशील देशों में टीकों के कारण क्षतिग्रस्त बच्चों को हर्ज़ाना देने और उनका पुनर्वास करने के लिए धन देते। वे चाहते, तो यह समझने के लिए अनुसंधान को समर्थन दे सकते थे कि क्यों 6 में से 1 बच्चा विकास सम्बंधी गड़बड़ी से ग्रस्त होता है, क्यों 54 प्रतिशत बच्चे गंभीर जीर्ण तकलीफों से ग्रस्त हो जाते हैं?, और क्यों 45 प्रतिशत बच्चे व 10-24 वर्ष के युवा तंत्रिका-मनोविकारों से पीड़ित हैं?, जैसा कि लैंसेट के हाल के अंक में उजागर किया गया है। टीकाकरण नामक अत्यंत विवादास्पद हस्तक्षेप में सब कुछ बढ़िया नहीं है। दरअसल, राजा ने कपड़े नहीं पहने हैं, मगर बदकिस्मती से कोई यह बताने वाला नहीं है। ***(स्रोत फीचर्स)***